ऋषिमंडलयंत्रपूजा।

(भाषाटीका सहित)

संपादक—

पं० मनोहरलालशास्त्री।

(जाप्यमंत्र-) ॐ ह्रां ह्रिं ह्रुं ह्रूं ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः असिआउसा
सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्रेभ्यो ह्रीं नमः ।
श्री ऋषिमंडल यंत्र.
प्रकाशक - प० मनोहरलाल शास्त्री
चंदावाडी मुंबई नं ४
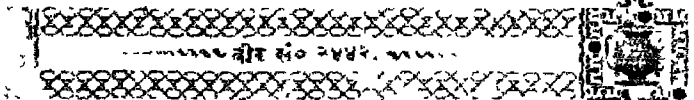
श्री परमात्मने नमः ।

श्रीमद्गुणनन्दिमुनीन्द्र विरचित

ऋषिमंडलयंत्रपूजा ।

(भाषा टीका सहित)

जिसको

पं० मनोहरलाल शास्त्री ने

सरल हिन्दी भाषा सहित

तयार की ।

और

जैनग्रंथ उद्धारक कार्यालयद्वारा

प्रकाशित की गई ।

प्रथमवार १५०० मूल्य ।-) आना.

ॐ नमः

प्रस्तावना

आज मै श्रीजिनेन्द्रदेवकी कृपासे प्रिय पाठकोके सामने अपूर्व मंत्रकी पुस्तक भाषाटीका सहित उपस्थित करता हू। जोकि द्वादशांगवाणी के बारवे अंगके चौदहपूर्वमेंसे विद्यानुवाद नामक दशवे पूर्वका अंगभूत है। जिसको श्रीमान् **गुणनंदी** आचार्यने यंत्रपूजासहित **ऋषिमंडल** नामसे रचा है। इससे बडा **विद्यानुशासन** नामका मंत्रशास्त्र विस्ताररूपसे रचा गया है जिसमें चौवीस अधिकार और पांच हजार मंत्र है। उनके नाम चार श्लोकोमे कहे गये है। वो निम्नलिखित हैं—

अथ मंत्रिलक्षणविधिर्मंत्राणां लक्ष्म सर्वपरिभाषा।
सामान्यमंत्रसाधनमुक्तिः सामान्यमंत्राणाम् ॥ १ ॥

गर्भोत्पत्तिविधानं बालचिकित्सा ग्रहोपसंग्रहणं।
विषहरणं फणितंत्रं मंडलयोत्र्यपनयो रुजां शमनं ॥२॥

कृतरुगथो मृत्प्रतिविधानमुच्चाटनं च विद्वेषः।
स्तंभः शांतिः पुष्टि वश्योऽप्याकर्षणं नर्म ॥ ३ ॥

अधिकाराणां शास्त्रेस्मिन्निमे चतुर्विंशतिः क्रमात्कथिताः
पंचसहस्राण्यस्य मंत्राणां भवति संख्यानं ॥ ४ ॥

उन चौवीस अधिकारोका सार इस छोटेसे ग्रंथमें रखकर घडेमें सागर भरने की लौकिक कहावतको सिद्ध कर दिखाया है। इस मंत्र शास्त्रकी

प्रशंसा लिखनी व्यर्थ है पाठकगण आप देखकर अनुभव करेंगे। इस गंभीरविषयका भाषानुवाद करनेमें जो परिश्रम हुआ है उसको पाठकगण ही निश्चय कर सक्ते है। इस पुस्तकमे संक्षेपसे यंत्र मंत्र बनानेकी विधि स्पष्ट रीतिसे दर्शाई गयी है। यद्यपि भक्तामरके मंत्रोंका माहात्म्य भी बहुत प्रसिद्ध हैं लेकिन साधनेकी विधिमे कठिनाइयां होनेसे योगीके समान स्थिरचित्तवाला ही सफलता प्राप्त कर सकता है। अन्यथा उसका परिश्रम वृथा जाता है। इसमे साधन विधि बहुत सरलतासे दिखलाई गई है। जिससे कि हरएक श्रद्धानी भव्यजीव लाभ उठा सकते है। इसके अंतमे यंत्रभी लगाया गया है और इसकी विषयसूची भी लगा दीगई है ताकि देखनेमें सुगमता हो। इसकी दो प्रतिया मुझे हस्त लिखित मिलीं परंतु वे बहुत अशुद्ध थीं इससे एकवार तो अनुवाद करनेका अनुत्साह हुआ परंतु श्वेताम्बर मणि स्वर्गीय श्रीयति मोहनलालजीकी स्मारक लाइब्रेरीसे टिप्पणीसहित स्तोत्रकी प्रति मिलनेसेही मेरा उत्साह उमग उठा। उस प्रतिसे मुझे बहुत सहायता मिली। इसलिये उस-लाइब्रेरीके **प्रबंधकर्ताओंको** कोटिशः धन्यवाद देता हूं तथा यंत्र बना हुआ **श्रीपार्श्वसागर ब्रह्मचारीनें** भेजकर जो अतिशय कृपा दिखलाई है उनको भी हार्दिक धन्यवाद देता हूं। इसके अतके पूजा प्रकरणमे यद्यपि अशुद्धिया कुछ रहगई है। उसका कारण शुद्ध प्रतिका न मिलना ही है। तौ भी शक्तिके माफिक जहातक हुआ है शुद्ध कर दिया गया है। यह ग्रंथ दिगंबर और श्वेताम्बर दोनों जैनसप्रदायोमें परम माननीय है। इससे इसका महत्व प्रगटही है। अब मेरी अंतमे यह प्रार्थना है कि जो प्रमाद वश दृष्टि दोषसे तथा ज्ञानकी न्यूनतासे अर्थांश वगैरःमे अशुद्धिया रहगई हो तो पाठक-गण मेरे ऊपर क्षमा करके शुद्ध करते हुए पाठ करें। मेरी समझमें

मंत्र यत्र विधिमे अशुद्धियां बिलकुल नहीं रहीं है। इससे अच्छी तरह पाठकोंको सफलता हो सक्ती है। यह छोटाग्रंथ मंत्रशास्त्ररूपी समुद्रमें प्रवेश होनेके लिये नौकाके समान अवश्य हो जाइंगा। ऐसी मै आशा करता हूं और अपने स्थापित "जैनग्रथ उद्धारक कार्यालय" रूपी वृक्षको सीचनेके वास्ते इस मंत्रविषयक ग्रंथरूपी जलघटको समर्पण करता हूं। इस ग्रंथके देखनेसे हमारे प्रिय पाठकोंको यदि संतोष हुआ। और आर्थिक सहायतासे प्रेरणाकी तो पूर्व कहे हुए **विद्यानुशासन मंत्रशास्त्रको** भी भाषानुवाद सहित सपादन करनेका साहस कर सकूंगा। और अपना परिश्रम सफल समझूंगा। इस तरह प्रार्थना करता हुआ इस प्रस्तावनाको समाप्त करता हूं। अलं विद्वत्सु।

खत्तरआली गह्ली हौंदाकी वाडी—बबई नं. ४
कार्तिक कृष्ण १४ स. १९७२

जैनसमाजका दास,
मनोहरलाल,
पाढम (मैनपुरी) निवासी।

श्री ऋषिमंडल यंत्रपूजा की विषयसूची।

श्रीमद्गुणनन्दिमुनीन्द्रविरचित

ऋषिमण्डल यंत्रपूजा ।

(संक्षिप्त भाषाटीका सहित ।)

मंगलाचरण—प्रणम्य श्रीजिनाधीशं, लब्धेः सामस्त्यसंयुतम् ।
ऋषिमंडलयंत्रस्य, वक्ष्ये पूजादिमल्पशः ॥ १ ॥

अर्थ—समस्त ऋद्धियोवाले श्रीजिनेन्द्रदेवको नमस्कार करके अल्पबुद्धिके अनुसार ऋषिमंडल—यंत्रकी पूजा आदि विधिको मैं कहता हूं ॥ १ ॥

यजमानलक्षणं (यजमानका लक्षण) ।

विनीतो बुद्धिमान् प्रीतो, न्यायोपात्तधनो महान् ।
शीलादिगुणसंपन्नो, यष्टा सोत्र प्रशस्यते ॥ २ ॥

अर्थ—इस यंत्रपूजाके विषयमे जो, विनयशील, बुद्धिमान्, प्रीतिमान्, न्यायसे धन कमानेवाला और ब्रह्मचर्य आदि गुणोसहित हो वही यष्टा अर्थात् पूजा करानेवाला प्रशंसा योग्य कहा जाता है ॥२॥

याजकलक्षणं (पूजा चढानेवालेका लक्षण) ।

देशकालादिभावज्ञो, निर्ममः शुद्धिमान् वरः ।
सद्वाण्यादिगुणोपेतो याजकः सोत्र शस्यते ॥ ३ ॥

अर्थ—देश काल द्रव्य भावका जाननेवाला हो, ममता (तृष्णा) रहित हो, अंतरंग बाह्य शुद्धिवाला श्रेष्ठ और मिष्टवचनादिगुणोसहित

हो वही याजक अर्थात् पूजा चढानेवाला यहां प्रशंसनीय कहा गया है ॥ ३ ॥

आचार्यलक्षणं (विधिके बतलानेवाले आचार्यका स्वरूप)

दर्शनज्ञानचारित्रसंयुतो ममतातिगः ।
प्राज्ञः प्रश्नसहश्चैव गुरुः स्यात् क्षांतिनिष्ठितः ॥ ४ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र सहित हो 'यह मेरा' ऐसी ममतासे रहित हो श्रेष्ठ विद्वान् हो प्रश्नोको सहनेबाला अर्थात् कैसाही प्रश्न किया जावे लेकिन मनमे क्षोभ नहीं हो और क्षमावान हो, वही गुरु अर्थात् आचार्य माना गया है ॥ ४ ॥

मंडपलक्षणं (पूजा करनेके स्थानका लक्षण)।

निर्मलं पृथुलं घंटातारकातोरणान्वितं ।
प्रलंबत्पुष्पमालाढ्यं चतुर्धा कुंभसंयुतं ॥ ५ ॥
भेरीपटहकंसालतालमर्दलनिःस्वनैः ।
आकुलं स्त्रैणगीताद्यैर्मंडपं कारयेद्बुधः ॥ ६ ॥ युग्मं ।

अर्थ—पूजाके मंडपकी जगह साफ हो, विस्तारवाली हो, घंटा, छोटी घटिकाये और तोरण (वंदनवार) सहित हो, लबी फूलोकी मालाओसे शोभायमान और चार कलशोकर सहित हो । भेरी ढोल मजीरा तवला मृदंगके शब्दोसे तथा स्त्रियोंके गीत मंगलोसे सुंदर ऐसा पूजाका मंडप बुद्धिमानको कराना चाहिये ॥ ५ ॥ ६ ॥

सामग्रीलक्षणं (पूजाकी सामग्रीका स्वरूप)

स्वजात्योत्कर्षणी पूता नेत्रमानसहारिणी ।
सामग्री शस्यते सद्भिर्निखिलानंदकारिणी ॥ ७ ॥

अर्थ—सुगंधित, पवित्र, नेत्र मनको हरनेवाली और सबको आनंद देनेवाली ऐसी सामग्री सत्पुरुषोंने बतलाई है ॥ ७ ॥

अथ यंत्रोद्धारः (अब यंत्रबनानेकी विधि कहते हैं)
कांचनीयेथवा रौप्ये कांसे वा भाजने वरे ।
मध्ये लेख्यःसकारांतो द्विगुणो यांतसेवितः ॥ ८ ॥
तुर्यस्वरमनोहारी बिंदुराजार्धमस्तकः ।
जिनेशास्तत्मत्यालेख्या यथास्थानं तदंतरे ॥९॥ युग्मं ।

अर्थ–यत्र सोने चांदी अथवा कांसे (तावे) का गोल थालीके आकार बनवाना चाहिये । उसके बीचके भागमे सकार अक्षरके अंतका अक्षर यानी 'ह' वर्ण यांत अर्थात् रकार मिला हुआ दुहरा (आर्नमेटैड) लिखना चाहिये । उसमे चौथा स्वर ईकारको लगाना और उसके माथेपर आधेचद्रमाके आकार चिन्हको बिंदु ऊपर रखकर बनाना । जैमे—ह्रीं । उस ह्रीं वर्णके बीचमे चौवीसों तीर्थकर, कहे जानेवाले क्रमसे लिखने चाहिये ॥ ८ ॥ ९ ॥

चंद्रप्रभपुष्पदंतौ मुनिसुव्रतनेमिकौ ।
सुपार्श्वपार्श्वौ पद्माभ-वासुपूज्यौ तथा क्रमात् ॥ १० ॥
कलायां तदुपरिष्टादीकारे मूर्ध्नि च स्फुटं ।
लेख्याः शेपा जिना गर्भे नमोयुक्ताश्च पीतभाः
॥ ११ ॥ युग्मं ।

अर्थ–'चद्रप्रभपुष्पदंताभ्यां नमः, ऐसा ह्रीं की अर्धचद्रमाकी कलामें लिखना 'मुनिसुव्रतनेमिभ्या नमः, ऐसा उस कलाके ऊपर बिंदुस्थानमें लिखै । 'सुपार्श्वपार्श्वाभ्या नमः, कहे हुए वर्णके ईकार स्वरमे लिखै । उस पूर्व कथित वर्ण (ह्रीं) के मस्तकमे 'पद्मप्रभवासुपूज्याभ्या नमः, ऐसा लिखै । और बचे हुए तीर्थकरोको अर्थात् 'ऋपभाजित-संभवाभिनंदनसुमति–शीतलश्रेयोविमलानत–धर्मशातिकुंथु–अरमल्लिनमिवर्धमानेभ्यो नमः, इसतरह उसके बीच भागमे लिखना चाहिये । जैसा कि यंत्रमें

सब दिखाया गया है। ये सब बीच भागके पीतवर्ण सोनेके समान प्रभावाले हैं ॥ १० । ११ ॥

ततश्च वलयः कार्यः तद्बाह्ये कोष्टकाष्टकं ।
तत्रेतिलेख्यं विबुधैश्चारुलक्षणलक्षितैः ॥ १२ ॥

अर्थ–उसके बाद ह्रीं वर्णके चारोतरफ आठ कोठोवाला गोला खीचै उन कोठोंमे सुंदर लक्षणोंवाले चतुर पुरुषोंको यह लिखना चाहिये। जो कि अब दिखलाते है। अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः, ह....।१। क ख ग घ ङ, भ....।२। च छ ज झ ञ, म.... ।३। ट ठ ड ढ ण, र....।४। त थ द ध न, घ....।५। प फ ब भ म, झ....।६। य र ल व, स....।७। श ष स ह, ख....।८। ह आदिके आगे जो बिंदु लिखी गई है वे मिले हुए अक्षरोंका बीजाक्षर है। जैसे हमलर व्यूँ। इसी तरह अन्य भी जानना। टाइपमें छप नहीं सक्ता सो यंत्रमे देख लेना ॥ १२ ॥

ततश्च वलयः कार्यो लेख्यास्तत्राष्टकोष्ठकाः ।
तत्रेति लेख्यं विबुधैश्चातुर्यान्वितविग्रहैः ॥ १३ ॥

अर्थ–इसके बाद फिर उसके चारो ओर आठ कोठोवाला गोला खींचना। उन कोठोमे चतुर शरीरधारी बुद्धिमानोको ऐसा लिखना चाहिये—ॐ ह्रीं अर्हद्भ्यो नमः । १ । ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः । २ । ॐ ह्रीं आचार्येभ्यो नमः । ३ । ॐ ह्रीं पाठकेभ्यो नमः । ४ । ॐ ह्री सर्वसाधुभ्यो नमः । ५ । ॐ ह्री तत्त्वदृष्टिभ्यो नमः । ६ । ॐ ह्रीं सम्यग्ज्ञानेभ्यो नमः । ७ । ॐ ह्री सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः । ८ । ॥ १३ ॥

ततश्च वलयः कार्यस्तत्र षोडशकोष्ठकाः ।
लेख्यास्तत्रेति लेख्यं च विद्वद्भिश्चतुरैर्नरैः ॥ १४ ॥

अर्थ—उसके बाद सोलह कोठोंवाला एक गोलाकार खेंचना चाहिये। उन सोलह कोठोमें चतुर पुरुषोंको ऐसा लिखना योग्य है—ॐ ह्रीं भावनेन्द्राय। १। ॐ ह्रीं व्यंतरेन्द्राय। २। ॐ ह्रीं ज्योतिष्केन्द्राय। ३। ॐ ह्रीं कल्पेन्द्राय ४ ॐ ह्रीं श्रुतावधिभ्यो नमः ५ ॐ ह्रीं देशावधिभ्योनमः ६ ॐ ह्रीं परमावधिभ्यो नमः ७ ॐ ह्रीं सर्वावधिभ्यो नमः ८ ॐ ह्रीं बुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्यो नमः ९ ॐ ह्रीं सर्वौषधिऋद्धिप्राप्तेभ्यो नमः १० ओ ह्रीं अनंतबलर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः ११ ओं ह्रीं तप्तर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः १२ ओ ह्रीं रसर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः १३ ओं ह्रीं विक्रियर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः १४ ओ ह्रीं क्षेत्रर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः १५ ओ ह्रीं अक्षीणमहानसर्द्धिप्राप्तेभ्यो नमः ॥ १६ ॥ १४ ॥

ततश्च वलयः कार्यः चतुर्विंशतिकोष्टकः।
तत्र लेख्याश्च कर्तव्याश्चतुर्विंशतिदेवताः ॥ १५ ॥

अर्थ—उसके पीछे चौवीस कोठोवाला गोलाकार बनावे उन कोठोमें चौवीस जैन शासन देवताओको लिखै। 'तद्यथा' वो ऐसे है—ओं ह्रीं श्रियै १ ओ ह्रीं ह्रींदेव्यै २ ॐ ह्रीं धृतये ३ ॐ ह्रीं लक्ष्म्यै ४ ॐ ह्रीं गौर्यै ५ ॐ ह्रीं चडिकायै ६ ॐ ह्रीं सरस्वत्यै ७ ॐ ह्रीं जयायै ८ ॐ ह्रीं अंबिकायै ९ ॐ ह्री विजयायै १० ॐ ह्रीं क्लिन्नायै ११ ॐ ह्रीं अजितायै १२ ॐ ह्रीं नित्यायै १३ ॐ ह्रीं मदद्रवायै १४ ॐ ह्रीं कामागायै १५ ॐ ह्रीं कामवाणायै १६ ॐ ह्रीं सानंदायै १७ ॐ ह्रीं नंदिमालिन्यै १८ ॐ ह्रीं मायायै १९ ओ ह्रीं मायाविन्यै २० ओं ह्रीं रौद्रयै २१ ओ ह्री कलायै २२ ओ ह्रीं काल्यै २३ ओं ह्री कालिप्रियायै २४ ॥ १५ ॥

ततो मायात्रिकोणे च देयं पत्रमनोहरं।
सर्वविघ्नापहं चैतद्ध्रींकारं प्रांतसंयुजं ॥ १६ ॥

अर्थ—उस यंत्रके चारों कोनोंमेसे तीनमे तो पत्र अर्थात् ओं क्ष्वीं क्षः इनको तथा चौथेमे विघ्नोंके दूर करनेवाले ह्री वर्णको, इस प्रकार ओ ह्रीं क्ष्वी क्षः चारोंको क्रमसे लिखना चाहिये ॥ १६ ॥ इस प्रकार यंत्र बना हुआ लगाया गया है उसको देखकर वनवाना ॥

अथ पूजा—(अब यंत्रकी पूजाका विधान लिखते है) ।

तत्रादौ ॐ णमो अरहंताण मित्यादि पठित्वेदमृषिमंडलस्तोत्रं च पठित्वा यंत्रोपरि पुष्पाजलि क्षिपेत् । तद्यथा—

अर्थ— उस पूजा करनेके पहले ' ॐ णमो अरहंताणं' इत्यादि पाठको पढकर यह आगे लिखे हुए ऋपिमडल स्तोत्रको वांचकर यंत्रके ऊपर पुष्पोको (क्षेपण करें) वर्षावे—वह इस तरह है । ॐ णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आयरीयाणं गमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं । चत्तारि मगलं अरहंत मगलं सिद्ध मंगल साहु मंगल केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगल । चत्तारि लोगोत्तमा अरहत लोगुत्तम । सिद्धलोगोत्तमा साहुलोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । २ । चत्तारि सरण प्रव्वजामि अरहंतसरणं प्रव्वजामि सिद्धसरणं पव्वजामि साहुसरणं पव्वज्जामि केविलपण्णत्तो धम्मोसरण पव्वज्जामि । एसो पंच-णमोयारो सव्वपापप्पणासणो । मंगलाणं च सव्वेसि पढमं होइ मंगल॥ इस प्रकार पाठको शुद्ध पढना ।

अथातः **ऋषिमंडलस्तोत्रं** पठेत् (इसके वाद **ऋषिमंडलस्तोत्र** का पाठ करे)

आद्यंताक्षरसंलक्ष्यमक्षरं व्याप्य यत्स्थितं ।
अग्निज्वालासमं नादं विंदुरेखासमन्वितं ॥ १ ॥
अग्निज्वालासमाक्रांतं मनोमलविशोधनं ।
दैदीप्यमानं हृत्पद्मे तत्पदं नौमि निर्मलं ॥ २ ॥ युग्मं ।

अर्थ—आदिके अक्षर अ और अंतके अक्षर ह को लिखना। इन दो अक्षरोके बीचमे सब वर्ण आ जाते हैं। अंतके वर्णको अग्नि-ज्वाला (र) में मिलाना उसका मस्तक विंदु और अर्धचंद्र रेखा सहित करना अर्थात् 'अर्हं' ऐसा बना। कैसा वह है? अग्निकी ज्वालाके समान प्रकाशमान है मनके मैलको धोनेवाला है आप निर्मल है और अर्हंत पदका कहनेवाला है। ऐसे प्रकाशमान 'अर्हं' पदको हृदयरूपी कमलमे स्थापन करके मनवचन कायसे मै नमस्कार करता हूं॥ १। २॥

ॐ नमोऽर्हद्भ्य ईशेभ्य ॐ सिद्धेभ्यो नमोनमः।
ॐ नमः सर्वसूरिभ्यः उपाध्यायेभ्य ॐ नमः॥ ३॥
ॐ नमः सर्वसाधुभ्यः तत्त्वदृष्टिभ्य ॐ नमः।
ॐ नमः शुद्धबोधेभ्यश्चारित्रेभ्यो नमोनमः॥४॥ युग्मं।

अर्थ—अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यक्चारित्र—इन आठोको वार २ नमस्कार होवै॥३।४॥

श्रेयसेस्तु श्रियेस्त्वेतदर्हदाद्यष्टकं शुभं।
स्थानेष्वष्टसु संन्यस्तं पृथग्वीजसमन्वितं॥ ५॥

अर्थ—ये अर्हंत आदि आठपद कल्याण स्वरूप वीजाक्षर सहित जुदे २ आठ दिशाओमे स्थापन किये गये सुख देवे और लक्ष्मीको देवै॥ ५॥

आद्यं पदं शिरो रक्षेत् परं रक्षतु मस्तकं।
तृतीयं रक्षेन्नेत्रे द्वे तुर्यं रक्षेच्च नासिकां॥ ६॥
पंचमं तु मुखं रक्षेत् षष्ठं रक्षतु घंटिकां।
सप्तमं रक्षेन्नाभ्यंतं पादांतं चाष्टमं पुनः॥ ७॥ युग्मं।

अर्थ—अर्हतादि आठ पदोंमें क्रमसे पहला अरहंतपद शिरकी रक्षा करो, दूसरा सिद्धपद माथेकी रक्षा करो, तीसरा आचार्य पद दो नेत्रोंकी चौथापद नासिका (नाक) की पांचवां मुखकी, छठा गलेकी सातवां नाभि (टुंडी) की और आठवां सम्यक् चारित्रपद पैरों की रक्षा करो ॥ ६ ॥ ७ ॥

मंत्र बनानेका विधि

पूर्वं प्रणवतः सांतः सरेफो द्वित्रिपंचषान् ।
सप्ताष्टदशसूर्यांकान् श्रितो विंदुस्वरान् पृथक् ॥ ८ ॥
पूज्यनामाक्षराद्यास्तु पंच दर्शनबोधनं ।
चारित्रेभ्यो नमो मध्ये ह्रीं सांतसमलंकृतः ॥ ९ ॥

अर्थ—पहले तो प्रणव अर्थात् ॐ को लिखे बादमें सकारांत अर्थात् ह को रेफ मिलाकर जुदा रखकरके उसपर अलग २ दूसरी आकारकी मात्रा, तीसरी इकारकी, पाचवीं उकारकी छठीं ऊ की सातवीं ए की, आठवी ऐ की दशवी औ की मात्रा विंदुओं सहित लगावे और बारमी अः की मात्रा लगावे अर्थात् ह्रा ह्रिं ह्रु ह्रूं ह्रे ह्रैं ह्रौं ह्रः—इस तरह लिखै । उसके बाद पूज्य पाच परमेष्ठियोके आदिके अक्षर पांच लेवै अर्थात् अ सि आ उ सा—इस प्रकार लिखै। और 'सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्रेभ्यो' लिखकर अंतके 'नमः' से शोभायमान ह्रीं को दोनो पदोंके मध्यमे लिखै । तव सब मत्र मिलकर ॐ ह्रा ह्रिं ह्रुं ह्रू ह्रें ह्रैं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा सम्यग्दर्शनज्ञानचरित्रेभ्यो ह्रीं नमः । ऐसा सत्ताईस अक्षरका मंत्र तयार हुआ ॥ ८ । ९ ॥

वीज इति ऋपिमंडलस्तवस्य यंत्रस्य मूलमत्रः, आराधकस्य शुभः नववीजाक्षरः अष्टादशशुद्धाक्षरः। एवमेकत्र सप्तविंशत्यक्षररूपः (२७)

अर्थ—इस ऋषिमंडलस्तवन यंत्रका मूलमंत्र सत्ताईस अक्षरका है, जिसमें नौं ९ वीज अक्षर हैं और अठारह शुद्ध अक्षर हैं। यह मंत्र आराधना (जाप) करनेवालोंको सब मनोकामना पूर्ण कर देनेसे शुभ है। इस मंत्रमें ॐ अक्षर पहले लगता है वह गिनतीमें नहीं आता परंतु उसके लगनेसेही मंत्रशक्ति प्रगट होती है ॥

जंबूवृक्षधरो द्वीपः क्षारोदधिसमावृतः ।
अर्हदाद्यष्टकैरष्टकाष्ठाधिष्टैरलंकृतः ॥ १ ॥
तन्मध्ये संगतो मेरुः कूटलक्षैरलंकृतः ।
उच्चैरुच्चैस्तरस्तारतारामंडलमंडितः ॥ २ ॥
तस्योपरि सकारांतं वीजमध्यास्य सर्वगं ।
नमामि विंवमार्हत्यं ललाटस्थं निरंजनं ॥ ३ ॥ विशेषकं

अर्थ—जंबूवृक्षको धारण करनेवाला द्वीप अर्थात् जंबूद्वीप है उसके चारों तरफ लवण समुद्र है। वह द्वीप आठदिशाओके स्वामी अर्हत आदि आठ पदोंसे शोभायमान है। उसके मध्यभाग (बीच) मे सुमेरु पर्वत है वह बहुत कूटोसे शोभायमान है। और उसके चारों तरफ एकके ऊपर एक ज्योतिश्चक्रको परिक्रमा देनेसे बहुत रमणीक माळूम होता है। ऐसे सुमेरु पर्वतके ऊपर सकारात बीज (ह्रीं)को विराजमान करके उसमे बैठे हुए घाति कर्मरूप अंजन रहित अर्हत भगवानको ललाट (मस्तक) मे स्थापित करके नमस्कार पूर्वक ध्यान करे ।१।२।३॥

अक्षयं निर्मलं शांतं वहुलं जाड्यतोज्झितं ।
निरीहं निरहंकारं सारं सारतरं घनं ॥ ४ ॥
अनुद्धतं शुभं स्फीतं सात्त्विकं राजसं मतं ।
तामसं विरसं बुद्धं तैजसं शर्वरीसमं ॥ ५ ॥

साकारं च निराकारं सरसं विरसं परं।
परापरं परातीतं परं परपरापरं ॥ ६ ॥

सकलं निष्कलं तुष्टं निर्वृतं भ्रांतिवर्जितं।
निरंजनं निराकांक्षं निर्लेपं वीतसंशयं ॥ ७ ॥

ईश्वरं ब्रह्मणं बुद्धं शुद्धं सिद्धमभंगुरं।
ज्योतीरूपं महादेवं लोकालोकप्रकाशकं ॥ ८ ॥ कुलकं

अर्थ—अब अर्हतके बिंबके ध्यानका स्वरूप बतलाते है कि अर्हत भगवानका बिब, अक्षय अर्थात् जन्ममरणरूप नाश रहित है, कर्म-रूपी मलसे रहित है शांत मुद्रावाला है, विस्तार वाला है, अज्ञानता रहित है इच्छा रहित है अहंकार रहित है श्रेष्ठ है अत्यत श्रेष्ट है सघन है मदसे (उद्धतपनेसे) रहित है शुभ है स्वच्छ है शांतिगुण होनेसे सात्विक है, तीन लोकका मालिकपना होनेसे राजसगुण वाला है आठकर्मोंके नाश करनेके लिये तामस गुणयुक्त है शृगार वगैरः रसोसे रहित है ज्ञानवान है तैजस है पूनमकी चादनी रातिके समान आनंद-कारी है। अर्हतकी अपेक्षा शरीर सहित होनेसे साकार है सिद्धकी अपेक्षा शरीर रहित होनेसे निराकार (आकार रहित) है ज्ञानरससे भरा हुआ है लेकिन रसादिविपयसे रहित है। उत्कृष्ट है क्रमसे उत्कृष्टसे भी उत्कृष्ट है। सकल अर्थात् अर्हत अपेक्षा शरीर सहित है सिद्धोकी अपेक्षा निष्कल शरीर रहित है संतोपको उपजानेवाला है भ्रमण रहित है कर्मांजनसे जुदा है इच्छासे अलग है कर्मलेप रहित है सशय रहित है सब भव्यजीवोंको हितकी शिक्षा देनेसे ईश्वर है ब्रह्मरूप है बुद्ध रूप है अठारह दोषोके न होनेसे शुद्ध है कृतकृत्य है आवगमन ससारमे न होनेसे क्षणभंगुरतासे रहित है। देवोसे पूजनीक होनेसे महादेव

है तीन लोक और अलोकको अपने ज्ञानसे प्रकाशनेवाला है। ऐसे स्वरूपका ध्यान करना चाहिये।

अर्हदाख्यः सवर्णांतः सरेफो विंदुमंडितः।
तुर्यस्वरसमायुक्तो बहुध्यानादिमालितः ॥ ९ ॥
एकवर्णं द्विवर्णं च त्रिवर्णं तुर्यवर्णकं।
पंचवर्णंमहावर्णं सपरं च परापरं ॥ १० ॥ युग्मं

अर्थ—अर्हतका वाचक सवर्णांत अर्थात् हकार है वह रेफ और बिंदुसे शोभायमान तथा चौथे ईकार स्वरसे युक्त है। जो मिलकर ह्रीं वीजवर्ण है वह ध्यान करने योग्य है। वह बीज अक्षर एक (सफेद) रंगवाला है दो (श्याम) रंगवाला है तीन (लाल) वर्णवाला है। चार (नीला) वर्णवाला है और पाचवा (पीला) वर्णवाला भी है। और वह सपर भी अर्थात् हकार भी अत्यंत उत्कृष्ट है ।९।१० ॥

अस्मिन् वीजे स्थिताःसर्वे ऋषभाद्या जिनोत्तमाः।
वर्णैर्निजैर्निजैर्युक्ता ध्यातव्यास्तत्र संगताः ॥११॥

अर्थ—इस ह्रीं बीजाक्षरमे सम्पूर्ण चौवीसो ऋषभादितीर्थंकर भगवान विराजमान है उनका अपने २ वर्णोंसे सहित ध्यान करना चाहिये ॥ ११ ॥ आगे ह्रीं के पाचवर्ण (रग) लिखते है;—

नादश्चंद्रसमाकारो बिंदुर्नीलसमप्रभः।
कलारुणसमा सांतःस्वर्णाभः सर्वतो मुखः ॥ १२ ॥
शिरःसंलीन ईकारो विनीलो वर्णतःस्मृतः।
वर्णानुसारसंलीनं तीर्थकृन्मंडलं नमः ॥ १३ ॥ युग्मं

अर्थ—ह्रीं बीजाक्षरकी नादकला आधे चद्रमाके आकार है वह सफेद रंग वाली है, विंदु काले रंगवाली है, मस्तकरूप कला (भाग) लाल रंगकी प्रभावाली है, सांत यानी हकार चारो तरफसे सोनेके

समान पीले रंगवाला है और माथेमें मिला हुआ ईकार नीले वर्णका है। उस ह्रींमें अपने २ रंगके अनुसार तीर्थंकर समूहका स्थापन किया गया है उसको नमस्कार है ॥ १२ । १३ ॥ अब इन पांचों भागोंमें तीर्थंकरोंको रंगके अनुसार स्थापन करनेकी विधि बतलाते है;—

चंद्रप्रभपुष्पदंतौ नादस्थितिसमाश्रितौ ।
विंदुमध्यगतौ नेमिसुव्रतौ जिनसत्तमौ ॥ १४ ॥
पद्मप्रभवासुपूज्यौ कलापदमधिश्रितौ ।
शिर ईस्थितिसंलीनौ पार्श्वपार्श्वौ(मल्ली)जिनोत्तमौ॥१५
शेषास्तीर्थकराःसर्वे रहस्थाने नियोजिताः ।
मायावीजाक्षरं प्राप्ताश्चतुर्विंशतिरर्हतां ॥ १६ ॥
गतरागद्वेषमोहाःसर्वपापविवर्जिताः ।
सर्वदा सर्वलोकेषु ते भवंतु जिनोत्तमाः ॥ १७॥ कलापकं

अर्थ—चंद्रप्रभ पुष्पदंत—ये दो तीर्थंकर अर्धचंद्राकार नादकलामें स्थापन करने, बिंदीके मध्यमे नेमिनाथ मुनिसुव्रतनाथ—इन दोनों जिनेन्द्रदेवोको, पद्मप्रभवासुपूज्य—इन दोनोको कलाके स्थान मस्तकमें, मस्तकमें मिली हुई ईकारमे सुपार्श्व और पार्श्वनाथ—इन दोनोंको स्थापन करै । और बाकीके सौलह तीर्थंकरोको रकार हकार—इन वर्णोंके मध्यमे लिखै । इस प्रकार चौवीसो तीर्थंकर मायाबीज (ह्रीं) में स्थित हैं । वो जिनेन्द्र देव रागद्वेष मोह-इन तीनोसे रहित है सब पापकर्मोंसे रहित है । ऐसे जिनेश्वर देव तीन काल और तीन लोकमें दर्शनपथको प्राप्त होवैं ।१४।१५।१६।१७॥

अब सर्पादिके भयकी रक्षाके मंत्र श्लोक कहते हैं;—

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा ।
तयाच्छादितसर्वांगं मां मा हिंसंतु पन्नगाः ॥ १८ ॥

अर्थ—देवोंके देव श्रीजिनेन्द्रदेव रूपी तीर्थकरोंके समूहकी प्रभासे ढके हुए मेरे सब शरीरको सर्प जातिके जीव पीडा मत दो। यह सर्पके भय दूर करनेका श्लोक है। इसी तरह आगे भी भयरक्षाके श्लोक कहे जाते है ॥ १८ ॥

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या विभा।
तयाच्छादितसर्वांगं मां मा हिंसंतु नागिनी ॥ १९ ॥

इसका अर्थ पहलेके समान है परंतु चौथाई चरणमें सर्पकी जगह नागिनी (सर्पिणी) का अर्थ कर लेना। इसी तरह आगे भी रक्षा श्लोकोंमे पूर्वकथित अर्थ जानना। केवल नाममात्र बदले जाइंगे। यह नागिनिसे रक्षा करनेका श्लोक है ॥ १९ ॥

देवदेवस्य यच्चक्रं तस्य चक्रस्य या बिभा।
तयाच्छादितसर्वांगं मां मा हिंसंतु गोनसाः ॥ २० ॥

यह गोनस (गोह) से रक्षा करनेका श्लोक है ॥ २० ॥

देवदेव०........वृश्चिकाः ॥ २१ ॥ यह **बीछूका** है।

देवदेव०........काकिनी ॥ २२ ॥ यह **कांक** का है।

देवदेव०........डाकिनी ॥ २३ ॥ यह **डाकिनी** का है।

देवदेव०........साकिनी ॥ २४ ॥ यह **साकिनी**का है।

देवदेव०........राकिनी ॥ २५ ॥ यह **राकिनी**का हैं।

देवदेव०........लाकिनी ॥ २६ ॥ यह **लाकिनी**का है।

देवदेव०........शाकिनी ॥ २७ ॥ यह **शाकिनी**का है।

देवदेव०........हाकिनी ॥ २८ ॥ यह **हाकिनी**का है।

देवदेव०........राक्षसाः ॥ २९ ॥ यह **राक्षस**का है।

देवदेव०........व्यंतराः ॥ ३० ॥ यह **व्यंतरदेवों**का है।

देवदेव०........भेकसाः ॥ ३१ ॥ यह **भेकस**का है।

देवदेव०........ते ग्रहाः ॥ ३२ ॥ नव ग्रहोंका है।

देवदेव०........तस्कराः ॥ ३३ ॥ चोरोंका है।

देवदेव०........वह्नयः ॥ ३४ ॥ अग्निका है।

देवदेव०........शृंगिणः ॥ ३५ ॥ सींगवालेजीवोंका है।

देवदेव०........दंष्ट्रिणः ॥ ३६ ॥ बड़ी २ डाढवालोंका है।

देवदेव०........रेलपाः ॥ ३७ ॥ रेलपजीवोंका है।

देवदेव०........पक्षिणः ॥ ३८ ॥ पंखवालोंका है।

देवदेव०........मुद्गलाः ॥ ३९ ॥ मुगल (गे) दैत्यका है।

देवदेव०........जृंभकाः ॥ ४० ॥ जृंभकदेवका है।

देवदेव०........तोयदाः ॥ ४१ ॥ जलस्थानका है।

देवदेव०........सिंहकाः ॥ ४२ ॥ नाहरका है।

देवदेव०........शूकराः ॥ ४३ ॥ सूअरका है।

देवदेव०........चित्रकाः ॥ ४४ ॥ सीतलाका है।

देवदेव०........हस्तिनः ॥ ४५ ॥ हाथीका है।

देवदेव०........भूमिपाः ॥ ४६ ॥ राजाका है।

देवदेव०........शात्रवः ॥ ४७ ॥ दुश्मनका है।

देवदेव०........ग्रामिणः ॥ ४८ ॥ खेतकी रक्षावालेका है।

देवदेव०........दुर्जनाः ॥ ४९ ॥ दुष्टका है।

देवदेव०........व्याधयः ॥ ५० ॥ रोगका हे।

श्रीगौतमस्य या मुद्रा तस्या या भुवि लब्धयः।
ताभिरभ्यधिकं ज्योतिरर्हं सर्वनिधीश्वरः ॥५१॥

अर्थ–श्रीगौतमस्वामी गणधर देवका जो स्वरूप उसकी लब्धि (जोति) पृथ्वीपर व्यापरही है उस ज्योतिसेभी अधिक ज्योति (प्रकाश) अरहंत भगवानकी है। वह भगवान सब विद्याओंका खजाना है॥५१॥

पाताळवासिनो देवा देवा भूपीठवासिनः।
स्वःस्वर्गवासिनो देवाः सर्वे रक्षंतु मामितः ॥ ५२ ॥

अर्थ—पाताल निवासी भवनवासीदेव, व्यंतरदेव, कल्पवासी दोनों तरहके देव सभी मेरी रक्षा करो ॥ ५२ ॥

येऽवधिलब्धयो ये तु परमावधिलब्धयः।
ते सर्वे मुनयो दिव्या मां संरक्षंतु सर्वतः। ५३ ॥

अर्थ—जो अवधिज्ञानकी लब्धिवाले और जो परमावधि ज्ञानकी सिद्धिवाले १२ वें गुणस्थानवर्ती प्रकाशमान मुनीश्वर मेरी सब तरफसे रक्षाकरो ॥ ५३ ॥

भावनेन्द्र व्यंतरेद्र ज्योतिष्केद्र कल्पेन्द्रेभ्यो नमः। श्रुतावधि देशावधि परमावधि सर्वावधि बुद्धिऋद्धिप्राप्त सर्वौषधिप्राप्तानंतबलर्द्धिप्राप्त रसर्द्धिप्राप्त विक्रियार्द्धिप्राप्त क्षेत्रर्धिप्राप्ताक्षीणमहानसर्धिप्राप्तेभ्यो नमः।

भावार्थ—भवनवासी आदिक १६ पदोंको नमस्कार है जो कि यंत्रके सोलह कोठोंमे है।

ॐ श्रीःह्रीश्च धृतिर्लक्ष्मीः गौरी चंडी सरस्वती।
जया वा विजया क्लिाना जिता नित्या मदद्रवा ॥ १ ॥
कामांगा कामवाणा च सानंदा नंदमालिनी।
माया मायाविनी रौद्री कला काली कलिप्रिया ॥ २ ॥
एताः सर्वा महादेव्यो वर्तंते या जगत्रये।
मम सर्वाः प्रयच्छंतु कांतिं लक्ष्मीं धृतिं मतिं ॥ ३ ॥
विशेषकं

भावार्थ—श्री ह्री वगैरः चौवीस जिनशासनकी रक्षा करनेवाली देवीं जो तीन लोकमे वर्तमान है वे सब महादेवीं मुझको कांति लक्ष्मी धैर्य और बुद्धिको देवै ॥ १।२।३ ॥

दुर्जना भूतवेतालाः पिशाचा मुद्गलास्तथा ।
ते सर्वे उपशाम्यंतु देवदेवप्रभावतः ॥ ४ ॥

अर्थ—दुष्टजन, भूत, वैताल, पिशाच और मुर्गदैत्य—ये सब मिथ्याती रौद्र परिणामी जीव श्रीजिनेन्द्रदेवके प्रभावसे शांत होवै ॥४॥

दिव्यो गोप्यः सुदुष्प्राप्यः श्रीऋषिमंडलस्तवः ।
भाषितस्तीर्थनाथेन जगत्राणकृतोऽनघः ॥ ५ ॥

अर्थ—ये ऋषिमंडलस्तोत्र बहुत तेज स्वरूपहै, हरएकको दिखलाने योग्य नहीं है अर्थात् श्रद्धानी ही पात्र हो सकता है। क्योकि गुप्त रखा जावे वही मंत्रका लक्षण है । इसका अभिप्राय कठिनतासे मालूम पडता है, जगतकी रक्षा करनेवाला है और निर्दोष है श्री महावीर तीर्थंकर देवने कहा है ॥ ५ ॥

यंत्रमंत्रका फल ।

रणे राजकुले वह्नौ जले दुर्गे गजे हरौ ।
श्मशाने विपिने घोरे स्मृतो रक्षति मानवं ॥ ६ ॥

अर्थ—युद्धमें, राजदरबारमे, अग्निसे, जलसे, किलेमे, हाथीसे, सिंहसे, मसानभूमिमे, और निर्जन वनमे यह मंत्र स्मरण (याद) किया जानेपर मनुष्यकी रक्षा करता है ॥ ६ ॥

राज्यभ्रष्टा निज राज्यं पदभ्रष्टा निजं पदं ।
लक्ष्मीभ्रष्टा निजां लक्ष्मीं प्राप्नुवंति न संशयः ॥७॥

अर्थ—राज्यसे छूटे हुए अपने राज्यको, मंत्री वगैरः पदसे रहित हुए अपने पदको, लक्ष्मी (धन) से रहित हुए अपने धनको पाते है । इसमे कुछ संदेह (शक) नहीं करना ॥ ७ ॥

भार्यार्थी लभते भार्यां पुत्रार्थी लभते सुतं ।
धनार्थी लभते वित्तं नरः स्मरणमात्रतः ॥ ८ ॥

अर्थ—इस स्तोत्रवगैरःके स्मरणके ही करनेसे स्त्रीके चांहनेवालेको स्त्री, पुत्रके इच्छकको पुत्र और धनकी इच्छावाले मनुष्यको धनकी प्राप्ति होती है ॥ ८॥

स्वर्णे रूप्ये पटे कांसे लिखित्वा यस्तु पूजयेत् ।
तस्यैवेष्टमहासिद्धिर्गृहे वसति शास्वती ॥ ९ ॥

अर्थ—इस यंत्रको सोने चांदी कपडे व कांसे या तांबेके पत्रपर लिखकर पूजे तो उसके घरमें हमेशा वांछित अर्थकी महान सिद्धि रहती है। अर्थात् ये मंत्र चिंतामणि रत्न है ॥ ९ ॥

भूर्जपत्रे लिखित्वेदं गलके मूर्ध्नि वा भुजे ।
धारितः सर्वदा दिव्यसर्वभीतिविनाशनं ॥ १० ॥

अर्थ—इस यंत्रको भोजपत्र नामके पत्तेपर लिखकर ताबीजमें भरकर गलेमें या मस्तकमें या वांहमे पहरलेवे तो हमेशा दैवीभूतवगैरः की बाधाओंसे रहित हो जाता है ॥ १० ॥

भूतैः प्रेतैर्ग्रहैर्यक्षैः पिशाचैर्मुद्गलैस्तथा ।
वातपित्तकफोद्रकमुच्यते नात्रसंशयः ॥ ११ ॥

अर्थ—भूत प्रेत नवग्रह यक्ष पिशाच मुगलदैत्य और वात पित्त कफ आदि रोगोंके उपद्रवोंसे छूट जाता है। इसमें सशय नहीं समझना चाहिये ॥ ११ ॥

भूर्भुवः स्वस्त्रयीपीठवर्तिनः शास्वता जिनाः ।
तैः स्तुतैर्वंदितैर्दृष्टैर्यत्फलं तत्फलं स्मृतेः ॥ १२ ॥

अर्थ—अधोलोक मध्यलोक ऊर्ध्वलोक वर्ती अकृत्रिम जिनचैत्यालय हैं उनके स्तवन, वंदना और दर्शन करनेसे जो फल मिलता है उतना ही फल इस स्तोत्र वगैरःके स्मरण करनेसे प्राप्त होता है। यह अंतिम फल है ॥ १२ ॥

एतद्गोप्यं महास्तोत्रं न देयं यस्य कस्यचित् ।
मिथ्यात्ववासिनो देये बालहत्या पदे पदे ॥ १३ ॥

अर्थ—यह महान स्तोत्र छिपाके रखना चाहिये हर किसीको नहीं देना, योग्य पात्रको ही बतलाना चाहिये। मिथ्यातीको देनेसे पद पदपर बालहत्याके समान पाप होता है ॥ १३ ॥

मंत्रकी विधि ।

आचाम्लादितपः कृत्वा पूजयित्वा जिनावलिं ।
अष्टसाहस्रिको जाप्यः कार्यस्तत्सिद्धिहेतवे ॥ १४ ॥

अर्थ—आचाम्ल (आंवल) आदि तप करके चौवीस जिन भगवानकी पूजाकरके आठ हजार जाप इष्टकार्यकी सिद्धिके लिये करना चाहिये ॥ **भावार्थ**–जमीनपर सोना, ब्रह्मचर्य, एक दफै दिनमें भोजन करना। जिसमें शक्ति हो तो मांडसहित चांवलके भातको केवल खाना और सब रसोंका त्याग। ऐसी क्रियाको **अचाम्ल तप** कहते हैं। उसके यदि शक्ति कम हो तो **निर्विकृति तप** 'अर्थात् एकवार शुद्ध भोजन और दूध, दही, घी, तेल, मिठाई, नमक–इन छह रसोमेसे किसीका त्याग करना, जिससे विकार आलस्य न हो ऐसा भोजन' करना चाहिये इन दोनोंमेसे इच्छित कोई एक तप करै जब तक कि ८००० आठ हजार जाप पूरे न हों। प्रति दिन सवेरेके समय सूर्यके दो घडी पहले उठकर शौचादि क्रिया करके मनवचन कायको स्थिर कर सामने यंत्र रखके पूजन व जप करना चाहिये। सौ दानेकी माला वनवाकर शुद्ध कपडे पहनके शक्तिके माफिक पांच दफै फेरनेसे पांचसौ या दस दफै फेरनेसे एक हजार जाप हो जाते हैं । इस लिये जाप करने वालेको आठ दिन या सोलह दिन लगेंगे। उतने दिनों तक क्रोध वगैरः कषायोंको बिलकुल न उत्पन्न होने देवै। श्रद्धान रखके शुद्ध मन वचन

कायसे करनेपर मन वांछित कार्यकी सिद्धि अवश्य होती है लेकिन विधीमें कमी न होवै ॥ १४ ॥

शतमष्टोत्तरं प्रातर्ये पठंति दिने दिने ।
तेषां न व्याधयो देहे प्रभवंति च संपदः ॥ १५ ॥

अर्थ—जो भव्य जीव शुद्धयोगसे प्रतिदिन प्रातःकाल उठकर एकसौ आठवारकी एक माला फेरते हैं और स्तोत्रका पाठ पढते हैं उनके शरीरमें रोग प्रगट नहीं होते वल्कि संपदायें उनके घरमें प्रगट होती हैं ॥ १५ ॥ इस प्रकार लौकिक फल कहकर अब असली पारमार्थिक फल कहते हैं;—

अष्टमासावधिं यावत् प्रातः प्रातस्तु यः पठेत् ।
स्तोत्रमेतन्महातेजस्त्वर्हद्विंबं स पश्यति ॥ १६ ॥
दृष्टे सत्यार्हते विंबे भवे सप्तमके ध्रुवं ।
पदं प्राप्नोति विश्रस्तं परमानंदसंपदां ॥ १७ ॥ युग्मं

अर्थ—मन वचन कायको शुद्ध करके स्थिर होकर सबेरे हररोज पहली कही हुई विधिसे पाठ करता हुआ आठवे महीनेमें अर्हंत भगवानके विंबका दर्शन अपने ललाटके ऊपर करलेता है। और अर्हंत प्रभुकी छविके दर्शन होनेसे सांतवे भव (जन्म) में निश्चयसे परम अतीं-द्रिय स्वाधीन आनंदका स्थान ऐसे मोक्ष पदको पाता है ॥१६।१७॥

इति श्री **ऋषिमंडलस्तवनं** (इस प्रकार श्री **ऋषिमंडल स्तोत्र** समाप्त हुआ) एतत् पठित्वा यंत्रोपरि पुष्पाजलिं क्षिपेत् (यह स्तोत्र पढकर यंत्रके ऊपर पुष्पांजलि वखैरे) ।

अथ चतुर्विंशति तीर्थंकर पूजा (अब यंत्रके कोठेमें रहनेवाले चौवीस तीर्थंकरोंकी पूजा कहते हैं) ।

ये जित्वा निजकर्मकर्कशरिपून् कैवल्यमाभेजिरे
दिव्येन ध्वनिनावबोधनिखिलं चंक्रम्यमाणं जगत् ।
प्राप्ता निर्वृतिमक्षयामतितरामंतातिगामादिगां
यक्ष्ये तान् वृषभादिकान् जिनवरान् वीरावसानानहं ॥

ओ ह्रीं ऋषभादिवर्धमानांतास्तीर्थंकरपरमदेवा अत्रावतरतावतरत संवौषट्। अनेन कर्णिकामध्ये पुष्पांजलिं प्रयुज्यावाहयेत् । आह्वाननं ॥ (इस मंत्रसे यंत्रकी कर्णिकामें पुष्प क्षेपकर सब तीर्थंकरोंका आह्वानन (आदरसे बुलाना) करै । इस प्रकार आह्वानन हुआ । ॐ ह्रीं ऋषभादिवर्धमानांतास्तीर्थंकरपरमदेवा अत्र तिष्ठत २ ठः ठः । अनेन कर्णिकामध्ये पुष्पांजलिं प्रयुज्य प्रतिष्ठापयेत्। स्थापनं। (इस मंत्रसे कर्णिकामें पुष्पोंको क्षेपण करके चौवीसोंको स्थापै) यह स्थापना हुई ।

ॐ ह्रीं ऋषभादि वर्धमानांतास्तीर्थंकर परमदेवा अत्र मम सन्निहिता भवत २ वषट् । अनेन कर्णिकामध्ये पुष्पाजलिं प्रयुज्य संनिधापयेत्। (इस मंत्रसे कर्णिकामे (बीचमे) पुष्प क्षेपकर अपने निकट करै) इसको संनिधान कहते हैं ।

अथ पूजा (अब अष्टद्रव्यादिसे पूजाकी विधि कहते है) ।

कर्पूरपंकजपरागसुगंधशीलैः
राकाशशांकविमलैः सलिलैर्जलौघैः ।
सन्मित्रतामुपगतैर्मधुरैर्लघिष्ठै—
र्द्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रियुगं महामि ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं ऋषभाजित सभवाभिनंदन सुमति पद्मप्रभसुपार्श्व चंद्रप्रभपुष्पदंतशीतल श्रेयांस वासुपूज्यविमलानंत धर्मशांतिकुंथु अरमल्लिमुनिसुव्रतनमिनेमि पार्श्ववर्धमानेभ्यस्तीर्थंकरपरमदेवेभ्यो जलं निर्वपामि इति

स्वाहा। जलं। एवं गंधादिष्वपि योज्यं (जैसे जल चढानेमें ॐ ह्रीं आदि कहा गया है वैसे ही चंदन वगैरः में समझ लेना)।

काश्मीरपूरघनसारगतोर्ध्वभावैर्बाह्यांतरंगपरितापहरैः पवित्रैः।

श्रीचंदनोत्कटरसैः सुरसैः सुभक्त्या द्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रि०

ॐ ह्रीं ऋषभाजितेत्यादि....गंधं निर्वपामीति स्वाहा।

माधुर्यगंधनिवहान्वितदिव्यदेहैः कुंदेन्दुसागरकफोज्ज्वल-चारुशोभैः।

शाल्यक्षतैः सुभगपात्रगतैरखंडैर्द्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रि० ॥३॥

ॐ ह्रीं ऋषभादि....अक्षतं निर्वपामीति स्वाहा।

मंदारकुंदकमलान्वितपारिजातजातीकदंबभसलातिथिस-त्प्रसूनैः।

गंधागतभ्रमरजातरवप्रशस्तैर्द्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रि० ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं....पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

नानारसैर्जिनवरैरिव चारुरूपैः श्रीकामदेवनिवहैरिवभक्ष-जातैः।

सव्यंजनैःस्वरकरैरिवलक्षणोघैर्द्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रि० ॥ ५॥

ॐ ह्रीं....चरुं निर्वपामीति स्वाहा।

दीपव्रजैरमलकीलकलापसारैर्निर्धूमतामुपगतैःसरलज्वलद्भिः।

पीतद्युतिप्रचयनिर्जितजातरूपैः द्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रि०॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं.... दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कृष्णागुरुप्रमुखसारसुगंधद्रव्यप्रोद्भूतमूर्तिभिरलं वरधूपजालैः।

धूमव्रजप्रमुदितादितिनंदनौघैःद्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रि० ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं........धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

नारंगपूगकदलीफलनालिकेरसन्मातुलिंगकरकप्रमुखैः फलौघैः
शाखासु पाक्यमधिगम्य विरक्तचित्तैः द्विर्द्वादशप्रमजिनांघ्रि० ८

ॐ ह्रीं....फलं निर्वपामीति स्वाहा ।

जलगंधाक्षतैः पुष्पैः चरुभिर्दीपधूपकैः ।
फलैरर्घं विधायैव श्रीजिनेभ्यो ददे मुदा ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं....अर्घं निर्वपामीति स्वाहा ।

अथ प्रत्येक **पूजा** (अब हरएककी जुदी २ **पूजा** कहते हैं)।

आनंदमेदुरशरीरमनंतबोधगंभीरनादविहितांबुधरावबर्धैः।
वापीयनाभिजजिनाद्भुतनाममेघं धर्मोपदेशजलजीवकृतानुरोधं

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीऋषभतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि निर्वपामीति स्वाहा ।

संसारसागरसमुत्तरणैकसेतुं ध्यानाग्नितापपरितापितमीनकेतुं।
सपूंजयेयमजितं जितरागशत्रुं निर्वाणमंतगतसीमसुसर्मगंतुं २

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थायश्रीअजिततीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

ध्यानानलप्रसरदग्धविधींदुकंदं श्रीसंभवं गतभवं नितराममंदं ।
देवावतंसविलसंतपदारविंदं सेवेय सप्तवरकेतुमनंतनंदं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीसंभवतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

पीयूषलेशनिवहोपगताभिषेकनिर्भासिताखिलशरीरगतातिरेकं
संपूजयेयमभिनंदनदेवमेकं कारुण्यवारिविहिताखिलजीवसेकं

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीअभिनंदनतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

कोकांकमानसजिताखिलपुंडरीकं पादावलग्नसुरसंघविलीनपंकं
अन्वर्थनामसहितं सुमतिं निरेकं वंदेयमानसतमोहरभव्यलोकं५

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीसुमतितीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

शोभाविशेषनिहतोद्धतवादिमानं सत्पुंडरीकवरलक्षणशोभमानं
पद्माभमत्र वदनं कृततत्त्वनामं वंदेय चारुमुनिमानसलोकमानं६

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीपद्मप्रभतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

सर्वोत्कभव्यजनजातकृतोर्ध्वभावं निःशेषकर्मगणनाशवरेण्य-भावं
सर्वावबोधपरिछिन्नसमस्तभावं सेवे सुपार्श्वमहिनाथमनंग-भावं ७

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीसुपार्श्वतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

चंद्रांकमिंदुविमलंजिनमर्चयामिकारुण्यवारिधितरंगितमासजंतं
चंद्रंविधूतनिखिलायमहाससेव्यंसाम्यप्ररूपमहिमांचितचारु-रूपं ८

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीचंद्रप्रभतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

श्रीपुष्पदंतजिनमानतपुष्पदंतं ध्वस्तांतरंगारिपुजातमनंगनष्टं ।
निःशेषसंगरहितं सहितं गुणौघैः संपूजयामि यतिनाथमनंत-बोधं ९

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीपुष्पदंततीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

कर्पूरचंदनहिमांशुनिभप्रवाचं ससारदावशमनं गमनं विमुक्तेः।
कारुण्यवारिधिमरिंदममूढमुक्ति श्रीशीतलेशमभिनौमि नता-
मरेशं १०

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीशीतलतीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि० ।

पुण्यानुबंधवरभूतिवृतं भदंतं यंच सतांपतिमनंतगुणं निरंतं ।
श्रेयांसमत्रनिहताखिलकर्मबंधं संपूजयामि विहिताखिलजीव-
बोधं ११

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीश्रेयांसतीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि० ।

निःशेषबोधकलितं कलितं यतींद्रैः कल्याणसंततिविधानसम-
र्थपुण्यं ।
दांतं विवृद्धकरुणारसमर्चयामि श्रीवासुपूज्यमधिगम्य वरप्र-
सत्तिं १२

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीवासुपूज्यतीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि० ।

यः पश्यतिस्मनितरांभुवनंसमस्तं संपूजयामिविमलंतमहंशरण्यं
नानाविधं प्रचुरजंतुभृतुंगतीतं स्वाभाविकागतजनुस्सहितं सु-
भक्त्या १३

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीविमलतीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि० ।

अंतातिगं विमलकेवलबोधरूपस्संजातचारुपदमीशमनंतसंज्ञं ।
संपूजयामि च नमामि तथा स्मरामि देवेन्द्रनागपतिसे-
वितपादपद्मं १४

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीअनंततीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

धर्मं जिनेन्द्रमभिनौमि नतामरेन्द्रं भव्याब्जखंडहरिदश्वमनेकमेकं
धर्मोपदेशविधिपुष्टसमस्तलोकं सर्वावबोधनयुतंजितमोहतंद्रं १५

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीधर्मतीर्थंकरपरमदेवायजलादि०।

शांतिं जिनं स्वपरशांतिविधानदक्षं संक्षिप्तमन्मथमनोरथ-
मेकलक्ष्यं ।

घातिक्षयस्फुरदनल्पविवोधरूपं संपूजयामि निजकांति-
जितार्यमाणं ।

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीशांति तीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि० ।

संभावयामि जिनदेवमनंतवीर्यं प्रोद्भूतनिर्मलविशालसुकीर्तिं-
मूर्तिं ।

कुंथ्वादिजीवसदयं सदयं महंतं कुंथुं गुणौघममरेशनुतं
भदंतं ॥१७॥

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीकुंथुतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि०।

षट्खंडभूमिजयलब्धवरिष्ठकीर्तिं संसारभोगगतराग-
निरस्तमूर्तिं ।

संपूजयेयमरनाथमनल्पबोधं सद्भव्यचातकघनाघन-
संनिभं तं ॥१८॥

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्री[illegible]तीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि०।

श्रीमल्लिनाथमसितं वरमर्चयामि पादद्वयानतनरेन्द्रसुरेन्द्र जातं।
क्रोधादिमोहगतवैरिगणप्ररुष्टसाम्यप्ररूढमनसं सुगिरं
निराश्र ॥ १९ ॥

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीमल्लितीर्थंकरपरमदेवायजलादि०।

संमानयामि मुनिसुव्रतनाथमेकं संसारघातनसमर्थबलप्रशक्तं।
नानामुनींद्रगणसंस्तुतपादयुग्मं संप्राप्तचारुनिखिलर्द्धिमनंत-
सौख्य २०

ॐ ह्री जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीमुनिसुव्रततीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि० ।

वंदामहे नमिजिनं गतरागदोषं पादाग्रघृष्टनिजमालसुरासुरौघं
बाह्यांतरंगतपसा श्रितकर्मदग्धं सत्सौख्यसागरनिमग्न-
मनंतदृष्टिं २१

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीनमितीर्थंकर परम देवाय जलादि.।

श्रीनेमिनाथमनिशं नितरां महामि शारायुधानुगतकृष्णनतांघ्रि
युग्म ।
निःशेषराज्यगसितुंगगतान्तरंगंकंजांकशोभितमनंगविनष्टभावं
२२

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीनेमितीर्थंकर परम देवाय जला०।

क्रोधोद्धतासुरविशेषकृतोपसर्गैरक्षोभ्यमानसमहीसकृता
पुरोघं ।
श्रीपार्श्वनाथमिह नष्टसमस्तपंकं संपूजयामि वरवांछित-
लब्धयेहं २३

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीपार्श्वनाथतीर्थंकरपरमदेवाय
जलादि० ।

सिद्धार्थभूपतिनिशांतविशिष्टभासि श्रीकुंडलाख्यपुरि जन्म ग्रहीतवान्यः ।
संपूजयामि जिननाथमनारतं तं श्रीवर्धमानमिह वांछितलब्धयेहं ॥२४॥

ॐ ह्री जगदापद्विनाशनसमर्थाय श्रीवर्धमानतीर्थंकरपरमदेवाय जलादि० ।

चतुर्विंशतितीर्थेशाःपूर्णार्घं प्रापितास्तरां ।
शांतिं श्रियं च कल्याणं कुर्वंतु जिनभाजिनां॥पूर्णार्घं ।

इति चतुर्विंशतितीर्थंकर पूजा (इस तरह चौवीस तीर्थंकरोकी पूजा समाप्त हुई) ।

अथ **बीजाक्षर** पूजा (अब **बीजाक्षरकी** पूजा कहते हैं) ।

हभमरघझसखाः पिंडवर्णादिसंयुता ।
अत्रावतरत तिष्ठत भवत संनिहितास्तथा ॥ १ ॥

आव्हानादिपुरस्सरप्रत्येकपूजाप्रतिज्ञानाय पद्मपत्रेषु पुष्पांजलिं क्षिपेत् (उस यंत्रपर आव्हाननादि कह कर पुष्पोंको क्षेपै) ।

स्ववर्गोपगतं चाये हपिंडाक्षरसयुतं ।
साग्नि सविंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥२॥

ॐ ह्रीं शाकिनी ग्रह भूत वेताल पिशाचादिकोच्चाटनादिनाशन-समर्थाय अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः संयु-ताय 'हमर्ल्व्यूं इति वीजवर्णाय जलादि निर्वपामीति स्वाहा ।

स्ववर्गोपगतं चाये भपिंडाक्षरसंयुतं ।
साग्नि सविंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥३॥

ॐ ह्रीं शा....क ख ग घ ङ संयुताय भमर्ल्व्यूं इति वीजवर्णाय जलादि० ।

स्ववर्गोपगतं चाये मपिंडाक्षरसंयुतं ।
साग्नि सबिंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥४॥

ओं ह्रीं शा....च छ ज झ ञ संयुताय मसलर्व्यूमिति इति बीज-वर्णाय जलादि० ।

स्ववर्गोपगतं चाये रपिंडाक्षरसंयुतं ।
साग्नि सबिंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥५॥

ओ ह्रीं शा....ट ठ ड ढ ण संयुताय रमलर्व्यूं इति बीजवर्णाय जलादि० ।

स्ववर्गोपगतं चाये झपिंडाक्षरसंयुतं ।
साग्नि सबिंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥६॥

ॐ ह्रीं शा....त थ द ध न संयुताय घमलर्व्यूं इति बीजवर्णाय०

स्ववर्गोपगतं चाये झपिंडाक्षरसंयुतं ।
साग्नि सबिंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥७॥

ॐ ह्रीं शा....प फ ब भ म संयुताय झ म्लर्व्यूं इति बीज० ।

स्ववर्गोपगतं चाये सपिंडाक्षरसंयुतं ।
साग्नि सबिंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं शा....य र ल व संयुताय स म्लर्व्यूं इति बीज० ।

स्ववर्गोपगतं चाये खपिडाक्षरसंयुतं ।
साग्नि सबिंदु सकलं षष्ठस्वरसमन्वितं ॥९॥

ॐ ह्रीं शा....श ष स ह संयुताय ख म्लर्व्यूं इति बीज० ।

ह भ म र घ झ स खाः पिंडवर्णादिसंयुताः ।
पूर्णार्घे मापिताः संतु शांतये शर्मणेतरां ॥१०॥

ॐ ह्रीं....पूर्णार्घे ।

इष्टप्रार्थना (इच्छित वस्तुकी प्रार्थना)।

ह भ म र घ झ स खाः पिंडवर्णादिसंयुताः ।
जलाद्यैः पूजिताः संतु श्रियै वृद्ध्यै समृद्धये ॥११॥

इत्यष्टबीजाक्षरार्चनं=इस प्रकार आठ बीजाक्षरोंकी पूजा समाप्त हुई ।

अथ **अर्हदाद्यर्चनं**=आगे अर्हंत वगैरः की पूजा ।

स्मरामि स्वगुणोपेतान् जिनान् सिद्धान् गुरूंस्त्रिधा।
तत्त्वदृग्ज्ञानचर्या च द्विभेदा मोक्षकारणं ॥१२॥

ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु तत्त्वदृष्टि ज्ञान चारित्राण्य-वतरावतर संवौषट् । अनेन पद्मपत्रेषु पुष्पांजलिं प्रयुज्यावाहयेत् । आव्हा-ननं । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु तत्त्वदृष्टि ज्ञान चारि-त्राण्यत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः । अनेन पद्मपत्रेषु पुष्पांजलिं प्रयुज्य प्रतिष्ठा-पयेत् । स्थापनं । ॐ ह्रीं अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु तत्त्वदृष्टि ज्ञान चारित्राण्यत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् । अनेन पद्मपत्रेषु पुष्पांजलिं प्रयुज्य संनिधापयेत् । सन्निधापनं

अथ **पूजा** (अब पूजा कहते हैं) ।

अर्हत्सिद्धगुरूंस्तत्त्वदृग्ज्ञानचरणानि च ।
तत्पदप्राप्तये सार्धं चाये सद्द्रव्यभावतः ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं मोक्षसुखोपलंभबीजभूतेभ्योऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय सर्वसाधु तत्त्वदृष्टिज्ञानचारित्रेभ्यो जल निर्वपामीति स्वाहा । एवं गंधादिष्वपि योज्यं।

अथ प्रत्येक पूजा (अब हर एककी पूजा कहते है) ।

प्राग्द्वाग्रत्नस्य वृष्टिं विसृजति धनदो भजे जिनशासनोक्तं
षण्मासांस्त्रियुक्तान् सुरयुवति वरं येषु गर्भेषु ।
स्नात्वा मेरौ विरज्य प्रवरमिति जनान् केवलज्ञानराज्ये
निर्वाणप्रांतवासो निखिलरिपुगणान् ये विजित्वा नुमस्तान्

ॐ ह्रीं जगदापद्विनाशनसमर्थेभ्यो अर्हद्भ्यो जलादि निर्वपामीति स्वाहा ।

साकार तद्विरक्तं जगदजगदिह ऋतुद्दष्ठा ।
प्रभवं ध्रौव्यनाशं यतुर्जदुराभिगतं तत्सतत्त्वं हि येषां
गौरागौरप्रणष्ट प्रचुरगुणमयं स्वच्छमत्यंतरम्यं ।
तान्सिद्धान् पूजयामि त्रिभुवनमहितान् ध्येयतामापु-
षोद्धाः ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं निष्ठितपरिपूर्णभव्यार्थेभ्यः सिद्धेभ्यो जलादि निर्वपामीति स्वाहा ।

निःशेषश्रुतसंगमोद्भवरसान्स्रक्तिप्रयुक्तिस्तरां
कुर्वंतो बहुमानसं गतमतिमाधूतमिथ्यामतिम् ।
नेतुं नाशमनारतं वरगुणान् सूरीन् यजामस्तकान्
ये मिथ्यामतवादिनां नयवतः प्रोत्साहकान्
भूरिशः ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं भेदाभेद रत्नत्रयपालनसमर्थेभ्यः सूरिभ्यो जलादि निर्व्वपामीति स्वाहा ।

सद्विद्याभ्यासचित्ता यतिपतिमहिता जाततत्त्वा-
वबोधाः
पंचाचाराश्चरंतः स्वयममृतधियश्चारयंतो गताशाः ।
शिष्यान् ये प्रीणयंतो विनयमुपगतान् सद्गिरा चारु
वृत्तान्
शास्त्रार्थं व्यंजयंत्या कृतनिखिलमुदा पाठकास्तान्
यजामः ॥ ४ ॥

ॐ ह्रीं सद्विद्यानुष्ठानाभ्यासोद्यतेभ्यः पाठकेभ्यो जलं निर्व्वपामीति स्वाहा ।

एकत्वस्थितिजातसत्सुखभरव्याधिस्फुटश्चेतना-
श्चर्या सांव्यवहारिकां बहुविध ये धारयंतो परां ।
शुद्धश्चात्मगतिप्रवृद्धमहिमास्तान् पूजयामो भृशं
साधून् साधितमानसेंद्रियगणान् पीयूषसेविस्तुतान् ॥

ॐ ह्रीं परम सुख प्राप्ति वद्ध कक्षा परे पेक्षानियमेभ्यः सर्व साधुभ्यो जलं निर्व्वपामीति स्वाहा ।

तत्त्वार्थरुचिरूपां त संसारानंत्यनाशिनीं ।
व्रतादिकमूलभूतां तत्त्वदृष्टिं भजाम्यहं ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं संसारांतकरणसमर्थायै तत्त्वदृष्टयै जलादि निर्वपामीति स्वाहा ।

तत्त्वार्थाधिगमाधीनं संशयादिकनाशनं ।
चारित्रमित्रताकारि सम्यग्ज्ञानं यजाम्यहं ॥ ७ ॥

ॐ ह्रीं सत्सुखप्राप्तिमूलभूताय सम्यग्ज्ञानाय जलादि निर्वपामीति स्वाहा ।

सर्व्वसावद्यरहितं रूपं चारित्रमंजसां ।
यजामि चारु भक्त्याहं संसारक्षयकारकं ॥ ८ ॥

ॐ ह्रीं स्वर्गादिसंपत्तिनिदानभूताय सम्यक्चारित्राय जलादि निर्व्वपामीति स्वाहा ।

अर्हत्सिद्धगुरुर्दृष्टिर्ज्ञानचर्या सुपूजिता ।
पूर्णार्घं प्रापिता श्रेयः संतु क्षेमाय शर्म्मणे ॥ ९ ॥

ॐ ह्रीं..पूर्णार्घं.

इत्यर्हदाद्यर्चनं (इस प्रकार अर्हंत वगैरःका पूजन)

अथ भावनेंद्राद्यर्चनं (अब भवनवासी वगैरःका पूजन)

भावनेशादिकाः शक्राः श्रुतावध्यादियोगिनः ।
आयातशब्दयोगेन युष्मानत्रोपविश्यतां ॥

अथ आह्वानादि पुरस्सरं प्रत्येकपूजाप्रतिज्ञानाय पद्मपत्रेषु पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।

अथ पूजा—

भावनेंद्रं यजामीह स्फुरंत निजसेवया ।
निजवाहनमारूढं भजंतं जिननायकं ॥ १ ॥

ॐ ह्रीं भावनेंद्रायेमं अर्घं, पार्द्यं गंधं पुष्पं दीपं धूपं चरुं वलिं स्वस्तिकमक्षतयज्ञभागं च यजामहे प्रतिगृह्यतामिति स्वाहा ।

व्यंतरेन्द्रं समर्चामि व्यंतरव्यूहसेवितं ।
नमंतं तीर्थनाथं तं विश्वविघ्नोपशांतये ॥ २ ॥

ॐ ह्रीं व्यंतरेंद्राय ।

ज्योतिष्केंद्रं स्फुरत्कांतिं जिनस्योपास्तितत्परं ।
वालिनां मानये तं च वाहनादिविभूतिगं ॥ ३ ॥

ॐ ह्रीं ज्योतिष्केन्द्राय ।

संभावयामि कल्पेशं सुधाधोनिवहानुगं ।
विभूत्या परया युक्तं जिनयज्ञोष्णतां गतं ॥ ४ ॥

ॐ ह्री कल्पेन्द्राय ।

श्रुतावधिमुनींश्चाये द्विधासंयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धि संयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥ ५ ॥

ॐ ह्रीं श्रुतावधिभ्यो नमः ।

विक्रियर्द्धिमुनींश्चाये द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥ ६ ॥

ॐ ह्रीं देशावधिभ्यो नमः ।

परमावधिमुनींश्चाये द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥७॥

ॐ ह्रीं परमावधिभ्यो नमः ।

सर्व्वावधिमुनींश्चाये द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥८॥

ॐ ह्रीं सर्व्वावधिभ्यो नमः ।

बुद्धयर्धिसन्मुनींश्चाये द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥९॥

ॐ ह्रीं बुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्यो नमः ।

सर्व्वौषधर्द्धिसंप्राप्तान् द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान्॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सर्वौषधिप्राप्तेभ्यो नमः ।

अनंतबलर्द्धिसंप्राप्तान् द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥११॥

ॐ ह्रीं अनतबलर्द्धिप्राप्तेभ्यः ।

तप्तर्द्धिगमुनींश्चाये द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥१२॥

ॐ ह्रीं तप्तर्द्धिप्राप्तेभ्यः ।

रसर्द्धिगमुनींश्चाये द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥१३॥

ॐ ह्रीं रसऋद्धिप्राप्तेभ्यः ।

विक्रियर्द्धिमुनींश्चाये द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥ १४ ॥

परमावधिमुनीं श्रायेद्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥७॥

ॐ ह्रीं परमावधिभ्यो नमः ।

सर्व्वावधिमुनीं श्रायेद्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥८॥

ॐ ह्रीं सर्व्वावधिभ्यो नमः ।

बुद्धयर्धिसन्मुनीं श्रायेद्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥९॥

ॐ ह्रीं बुद्धिऋद्धिप्राप्तेभ्यो नमः ।

सर्व्वौपधर्द्धिसंप्राप्तान द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं सर्वौपधिप्राप्तेभ्यो नमः ।

अनंतबलर्द्धिसंप्राप्तान् द्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥११॥

ॐ ह्रीं अनंतबलर्द्धिप्राप्तेभ्यः ।

तप्तर्द्धिगमुनीं श्रायेद्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥१२॥

ॐ ह्रीं तप्तर्द्धिप्राप्तेभ्यः ।

रसर्द्धिगमुनीं श्रायेद्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥१३॥

ॐ ह्रीं रसऋद्धिप्राप्तेभ्यः ।

विक्रियर्द्धिमुनीं श्रायेद्विधा संयमपालकान् ।
तादृग्विशुद्धिसंयुक्तान् ध्यानसंगतमानसान् ॥ १४ ॥

त्रैलोक्यनायकं धीरं, संसारार्णवतारकं ।
जिनं भजंतीं सद्भक्त्या ह्रीं देवीं पूजयाम्यहं ॥ १ ॥
ॐ ह्रीं ह्री देवि ।

अनन्तसुखसम्पन्नं भवातीतं निरंजनं ।
दधतीं हृदि तीर्थेशं चायेहं धृतिदेवतां ॥ २ ॥
ॐ ह्रीं धृति देवि ।

अनंतदर्शनज्ञानंसुखवीर्यगुणाकरं ।
लक्ष्मीदेवी समर्चामि सेवमानां जिनं तरां ॥ ३ ॥
ॐ ह्रीं लक्ष्मी देवि ।

सुरासुरनराधीशसेवितं जिनसत्तमं ।
सज्ज्ञानदायकं चाये गौरीं मनसि कुर्व्वतीं ॥ ४ ॥
ॐ ह्रीं गौरी देवि ।

सत्कांतिविसरव्याप्तशरीराकारमंजसा ।
सेवते जिननाथं या पूजयामीह चंडिकां ॥ ५ ॥
ॐ ह्रीं चंडिके देवि ।

कर्म्मशात्रवविध्वस्तं, सुंदराकारशोभितं ।
सरस्वती नमंती तां जिनेन्द्रं तुष्टिमानये ॥ ६ ॥
ॐ ह्रीं सरस्वति देवि ।

निर्विकारनिराकारनिराकांक्षादिसंयुतं ।
स्वभावभावनातीतां समर्चामि जिनं जयां ॥ ७ ॥
ॐ ह्रीं जये देवि ।

तामंविकामहं चाये या जिनं सेवतेनरां ।
दिव्यध्वनिसमायुक्तं ज्ञानं व्याप्तजगत्रयं ॥ ८ ॥
ॐ ह्रीं अंबिके देवि ।

निःशेषघात्यरातीनां नाशं कृत्वा जिनो हि सः।
तत्त्वसास्तिचयसेव्यो यस्यास्तां विजयां यजे ॥९॥

ॐ ह्रीं विजये देवि।

जगत्संबोध्य यः प्राप्तो निर्वृतिं जिनराड् महान्।
तं सेवमानां क्लिन्नाख्यां प्रापयामि मुदंतरां ॥ १० ॥

ॐ ह्रीं क्लिन्ने देवि।

या तनोति नतिं नित्यं भक्तिं प्रव्यक्तमानसा।
जिनदेवेऽजितां तां हि वलिनोपकरोम्यहं ॥ ११ ॥

ॐ ह्रीं अजिते देवि।

विमलं निर्म्मलं ज्ञानं चक्षुषं लोकपावनं।
जिनं चानुनयंतीं तां नित्याह्वां देवतां यजे ॥ १२ ॥

ॐ ह्रीं नित्ये देवि।

अंतातीतं जगद्व्यापि ज्ञानं यस्य मदद्रवं।
संसेवते जिनं यातं देवीं तां मुदमानयेत् ॥ १३ ॥

ॐ ह्रीं मदद्रवे देवि।

समं ददर्श लोकं यो स वह्वाकारमंडितं।
तं जिनं भजमानां तां कामांगां करवै सुखं ॥ १४ ॥

ॐ ह्रीं कामांगे देवि।

कर्म्मचक्रं क्षयं नीत्वा यः प्राप परमं पदं।
स्मरंतीं तं जिनं भक्त्या कामवाणां मुदा नये ॥ १५ ॥

ॐ ह्रीं कामवाणे देवि।

सानंदां देवतां चाये या तनोति मुदं जिने।
नित्यानंदभरव्याप्ते निखिलामरसेविते ॥ १६ ॥

ॐ ह्रीं सानंदे देवि।

पूजयामीह तां देवीं नंदिमालिनिकां जिने।
भक्तिं करोति या नित्यं दृष्ट्वा तु सपरिच्छदा ॥ १७ ॥
ॐ ह्रीं नंदिमालिनि दे वे।
मायादिदोषनिर्मुक्तं व्याप्ताशेषजगत्रयं।
सेवमानां जिनं मायां धिनोमि बलिना मुदा ॥ १८ ॥
ॐ ह्रीं माया देवि।
मायाविनीं भजे देवीं जिननाथं भजत्यलं।
मायाजरपददातारं शांतरूपं कले यकां ॥ १९ ॥
ॐ ह्रीं मायाविनि देवि।
रौद्रभावस्य हंतारं कर्त्तारं मोक्षकांक्षिणं।
सुखस्य रौद्री भजती जिनं चाये मनोहरं ॥ २० ॥
ॐ ह्रीं रौद्री देवि।
निष्फलं सकल भूतमभूतं जिनमुत्तमं।
निजवित्तनयंतीतां, कलादेवीं महाम्यहं ॥ २१ ॥
ॐ ह्रीं कले देवि।
स्वच्छमस्वच्छमव्यक्तं व्यक्तं नित्यमनित्यकं।
उपकुर्यामहं कालीं भजंतीं जिननायकं ॥ २२ ॥
ॐ ह्रीं काली देवि।
अक्षायिज्ञानपूरेण संभृतं सत्समज्ञकां।
कलिप्रियां सेवमानां समर्चामि जिनोत्तमं ॥ २३ ॥
ॐ ह्रीं कलिप्रिये देवि।
इत्येता श्च्यादिका देव्यो जिनसेवापरायणाः
अनुगृह्णंतु जैनांश्च पूर्णार्घे प्रापितान्नरान् ॥ २४ ॥

पूर्णार्घं।

इष्टप्रार्थना ।

श्र्यादिकाः सकला देव्यः शांतिं तन्वंतु पूजिताः ।
जलगंधाक्षतैःपुष्पैश्चरुदीपफलादिकैः ।
इति श्र्यादिदेवतार्चनं ।

अतःपरं ऋषिमंडलस्तोत्रोक्तमहामंत्रेण यंत्रोपरि जलप्रक्षालित त्वचगानात्तदभावे जात्यादिपुष्पानां वा अष्टोत्तरशतं शुद्धैकाग्रस्थिरमनसा जपेत् । ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूँ ह्रों ह्रः हैं हैं ह्रः । ततःपरं चतुर्विंशति तीर्थकराणामिमां जयमालां पठेत् । तद्यथा ।

पणविवि जिणदेवहं । सुरकयसेवहं णासिय जम्म जरा भरहं । सिवसुहकयरावहं । गयमयरायह णिय भत्तिए जुत्तिए थणमि ॥

जय आइणाह कम्मादि वाह । जय अजिय जिणेसर मोहदाह
जय संभव गयभवरायडंभ जयआहिणंदणाजिणपरमवंभ ॥ १
जय सुमइकुमइंगयराय देव, जय पउम्पह सुर विहिय सेव ।
जय जय सुपास मणहर सुभास, जयचंद प्पह जिय चंद्हास ॥
जय पुप्फयंत जिय पुप्पयंत, जय सीयल णिरासिइपी इंकंत
जयसेय देव कय भव्व सेव, जय वांसु पुज्ज सुरकियण सवे ॥ ३ ॥
जय विमल जिणेसर विमल णाम जय जिण अणंतगय परम ठाण ।
जय धम्म धम्मदेसणसमत्थ जय संति संति गय गच्छ सच्छ ॥ ४ ॥
जय कुंथु सामि गयकम्मपंक जय अर अर सामियसमियसंक ।

जय मल्लि सामि णिय सत्तभंग जय मुणिसुव्वय तव जिय अणंग ॥ ५ ॥

जय पास देव फणि विंब देव जय वड्ढमाण गुणगण गरिट्ठ ॥ ६ ॥

घत्ता—

इय थुणमि जिणेसर महि परमेसर णासियकम्म कलंक भरे।

सुर बहु संसिय भम मइ भंसिय उत्ता रिज्जइ अघु बरं॥

अत्यादरेण अति संभ्रमेण त्रिःप्रद क्षिणया एतत् पठित्वा जलादि चितं स्वर्णादि भाजन स्थितं पूर्णार्घं अवतार्य प्रणमंति शक्रादय अपिव। यदि पूजायां पूर्णतां गतायां सत्या कियती रात्रिस्तिष्ठति। तदा तीर्थंकराणां स्तोत्रादिकथनेन तां पूर्णतामानीय प्रभाते स्तवनविधि कुर्यात्।

ततःपरं शांतिजिनं शशिनिर्मलवक्त्रमित्यादि पठित्वा शांति विद्ध्यात् ततश्चाशीर्वादाः पठनीयास्तथा।

निःशेषामरशेस्वरार्चित पद द्वंदो ल्लसन्नस्व त्रातप्रोद्गत
काति संहति संहति हतिहत प्रव्यक्त भक्त्या
सब लसद्गीर्व्वाणेशमहोत्तमांग मुकुट प्रस्फूर्त्तिम द्रवभा
ऋद्धि व्रधिमनारतं जिनवराः। कुर्वंतु नः सर्वदा।

अशेषकर्म्मारि विनाश जात प्रस्पष्ट दृग्ज्ञप्तिसुख स्वरूपा।

क्षांतिधृतिं शर्म शिवं च सिद्धास्तन्वंतु वो वांछितदान दक्षाः।

ये चारयंति च चरंति मलव्यतीतं पंचागमाचरण मत्र विनेय वर्गान्।

ते संतु चारु निर आनत देववर्गा सौख्याय चारु
मतयो गुरवस्त्रिधापि ॥

भावनेशादिकाः शक्रा दिव्या हि श्र्यादिका वराः ।
अन्येपि च सुपर्व्वाणः विघ्नघाताय संतु वः ॥
यावच्चंद्रो क्षमात्र प्रचपति भुवने गागमण्णः सुमेरु
यावत्स्वर्गः समुद्राः सुर विसर भ्यताः सद्विमानामा कुलाग्रो ।
यावन्नक्षत्र मार्गो जिनपति भवनान्यस्तकर्मारि चक्राः
सिद्धास्व पुत्र पौत्रः सुखमनुभवं वैः संजुतो नंद जीव ॥

इत्येतानाशीर्वादान् पठित्वा यष्टस्तद्धार्यया वस्त्रे जिनांघ्रि प्रसून प्रचयं प्रक्षिपेत् । ॐ समाहूता देवाः सर्व्वे स्वस्थानं गच्छतो गच्छतः ।

इति विसर्जनमंत्रोच्चारणेन यन्त्रोपरि पुष्पाञ्जलिं वितीर्य देवान् विसर्जयेत् ।

चतुर्विंशतितीर्थेशास्तथार्हदादयोपि च ।
अष्टावपि स्फुरन्वन्नपरमानंदकारिणः ॥

इत्यनेन चतुर्विंशतितीर्थेशानष्टावर्हदादींश्चाध्यात्ममध्यासयेत् ।

इति देवताविसर्जनं ॥

कर्मारातिचतुष्टयाक्षयमगात्संजातवान् बोधराट्
वाणीविश्वहितंकरा समभवद्विश्वार्थ संदर्शनी ।
येषां देवमहीशसंस्तुतघटा भव्याब्जपूष्णांसतां
लक्ष्मीं शांतिमनारतं जिनवरास्तन्वंतु ते भावुकं ॥

अनेन यंत्राग्रे शांतिधारा प्रकल्प्यैत्रवलिं विदध्यात् ॐ अर्हद्भ्यो नमः । सिद्धेभ्यो नमः सूरिभ्यो नमः पाठकेभ्यो नमः, सर्व्व साधुभ्यो नमः, अतीताना गत वर्त्तमान त्रिकाल गोचरानंतद्रव्य मनःपर्यायात्मक

वस्तुपरिच्छेदक सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राद्यनेक गुण गणधारक परमेष्ठिभ्यो नमः पुण्याहं, प्रीयंतां, ऋषभादि वर्धमान पर्यंत तीर्थंकरपरमदेवास्तत्समयपालिन्यः प्रतिचक्रेश्वरी प्रभृति चतुर्विंशति यक्ष्यः आदित्य, सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति शुक्र, शनि, राहु, केतु, प्रभृत्यष्टाशीति ग्रहाः। वासुकि संपाल कर्कोटक पद्म कुलिकानत तक्षक महापद्म। जय विजय नाग यक्ष गंधर्व ब्रह्मराक्षस भूत व्यंतरप्रभृति भूताश्च सर्वेप्येते जिनशासन वत्सलाः।

ऋष्यर्जिका श्रावक श्राविका यष्ट याजक राज मंत्रि पुरोहित सामंता रक्षक प्रभृति समस्त लोकसमूहस्य शांति वृद्धि पुष्टि क्षेम कल्याण स्वायुरारोग्यप्रदा भवंतु सर्वसौख्यप्रदाश्च संतु। देशे राष्ट्रे पुरेषु च सर्वदैव चौरामारीति दुर्भिक्षावग्रह विघ्नौघ दुष्टग्रह भूत शांकिनी प्रभृत्यशेषान्यनिष्टानि प्रलय प्रयांतु। राजा विजयी भवतु। प्रजा सौख्यं भवतु। राजा प्रभृति समस्त लोकाः सतत जिनधर्म वत्सलाः पूजा दान व्रत शील महा महोत्सव प्रभृतिषूद्यता भवंतु चिरकाल नंदतु। यत्र स्थिता भव्यप्राणिनः संसारसागरं लीलयैवोत्तीर्यानुपमसिद्धिसौख्यमनतकालमनुभवंत्विति पठित्वा सर्व्वतः पुष्पाक्षतादिभिर्बलिं दद्यात्।

इति बलि विधानं।

ततो स्वागतसंघं च शक्रं निजपरिच्छदा
गुर्वादिकं तथान्यांश्च तर्पयेच्च यथायथं।
करोति कारयत्येव कुर्वंतमनुमोदते।
इमां पूजां हि यो धन्यो गुणनंदी स जायते॥ २॥

भावार्थ—यंत्रकी पूजा के बाद मुनि, आर्जिका, श्रावक, श्राविका तथा अपने साधर्मी भाइयोंको आहार दान समदान वगैरःसे यथायोग्य

सत्कार करै। आचार्य कहते हैं कि जो इस ऋषिमंडल यंत्रकी पूजाको शुद्धमन वचन कायसे करेगा, करावेगा तथा करते हुए की मनसे भावना व प्रशंसा करेगा 'अर्थात् तुमने बहुतही उत्तम कार्य किया मुझको भी कोई शुभ अवसर मिलेगा तो करूंगा इत्यादि, वह धन्य पुरुष गुणोमे ही आनद करनेवाला अर्थात् निराकुल सुखको भोगने वाला अवश्य हो जायगा ॥ १ । २ ॥

ग्रंथकर्ताकी प्रशस्ति।

गुणानंदि मुनींद्रेण रचिता भक्तिभावततः।
शतत्रयाधिकाशीतिश्लोकानां ग्रंथसंख्यया ॥ १ ॥

अर्थ—यह ऋषिमडल यत्रकी पूजा **श्री गुणनंदि** मुनीश्वरने अत्यंत भक्तिभावसे रची है। इसकी ग्रंथ संख्याका प्रमाण एकसौ तिरासी श्लोकके अनुमान है।

रिक्तपात्रगुणवच्छी ज्ञानभूपाह्विभा—
गर्हच्छासनभक्तिनिर्मलरुचिः पद्माजनुर्वा शुचिः।
वीरातः करणश्च चारुचरणै र्बुद्धिप्रवीणोरचत्
पूजां श्रीऋषिमंडलस्य महता नंदी मुनिः सौख्यदां
॥ १ ॥